भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष–12, अंक–5 गुरुवार, 25 जून '89	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी	वार्षिक चन्दा–10.00 प्रति अंक : 1.00

शुभम् भवतु—मंगलं भवतु की महामंगल घड़ी !

धन्य भाग्य.....धन्य घड़ी.....12 जून..... सनातन दिव्य स्वरूप–चैतन्यशिल्पी–हम सभी के प्राणाधार प्रभुस्वरूप प.पू. काकाजी का प्राकट्य दिन !!! गुरुभक्ति अदा करने का अनुपम मंगल अवसर.....गुरुहरि योगीजी महाराज द्वारा पसंद किये गये 'केसरी सिंह' के प्रति कृतनिश्चयी होकर उनके संकल्प में स्वयं को याहोम करके उनके स्वप्न को साकार करने की प्रतिज्ञा का दिन....प्रभु को सच्चे अर्थ में समर्पित सच्चे सेवक की जयंती.....

महारज के साथ स्वामी जैसा गुरुहरि योगीजी महाराज के साथ हमारी कल्पनाओं से परे का स्वामीसेवक भाव का प.पू. काकाजी एक अद्वितीय संबंध था। उस संबं के कारण ही कईयों को प.पू. काकाजी में योगीजी महाराज का दर्शन हुआ। योगीजी महाराज के प्रति पराभक्ति अदा करने उनकी कल्याण योजना में गुणातीत समाज के लिये समग्र जीवन की हरेक पल व रोम-रोम अर्ध्य प.पू. काकाजी ने दिया ! गुणातीत समाज सदैव इनक ऋणी रहेगा !!

ऐसा नहीं कि 1952 का साक्षात्कार होने के बाद ही प.पू. काकाजी की प्रतिभा सामने आई हो ! बचपन से युवावस्था तक के कितने ही प्रसंग निहारें, तो पता चलता है कि वह कितने निडर, स्वाभिमानी, निर्भय, शूरवीर, महत्वाकांक्षी थे। चंदन की लकड़ी चाहे छोटी सी हो या बड़ी, पर उसे कहीं भी रख दो उसकी सुगंध हरेक को अपनी ओर सहज ही आकर्षित करती ही है। मोम्बासा में एक बार स्कॉलरशिप देने जब ट्रस्ट के प्रैसीडेण्ट पू. बेचरकाका (जो बाद में गुणातीत समाज के एक आत्मीयजन ही बन गये) ने जरा सी आनाकानी करी तब प.पू. काकाजी ने स्पष्ट शब्दों में कह दिया था–'अब तो तुम स्कालरशिप दो तब भी मुझे नहीं चाहिये, पर तुम्हारे पास से भविष्य में मैं और बहुत कुछ लूंगा।' यह ऐलान बहुत छोटी उम्र का था, परन्तु हमने देखा कि पू. बेचरकाका ने प.पू. काकाजी व प.पू. पप्पाजी के वचन से गुणातीत समाज की खूब सेवा करी। जिसे अपनी सत्ता-सामर्थ्य का पूरा ख्याल हो वही भविष्य के बारे में ऐसी घोषणा कर सकता है न?

निडर भी कैसे थे?—1950 में प.पू. काकाजी लंदन के सेवॉय होटल में रुके थे। Hotel के बगीचे में उनके साथ ही बैठे Electric बल्ब मेन्युफैक्चरर 75 वर्ष के जगविख्यात अरबोंपति श्री फिलिप्स अपने कुत्ते के साथ गेंद का खेल खेल रहे थे। प.पू. काकाजी आधा घंटे तक यह खेल देखते रहे...। फिर हंस पड़े। श्री फिलिप्स ने प.पू. काकाजी को पूछा कि 'तुम क्यों हंस रहे हो?' प.पू. काकाजी ने तो अपने स्वाभाविक शूरवीर स्वभाव के कारण तुरंत कहा, 'मैं तुम्हारी मूर्खता पर हँस रहा हूँ।' पैसे व अहम् के ही अखंड नशे में रहने वाले श्री फिलिप्स प.पू. काकाजी के इन शब्दों को सुनकर स्तब्ध रह गये। पर फिर पूछा ''तुम कौन सी मूर्खता पर हंस रहे हो?'' पू. काकाजी ने जवाब दिया, **'तुम तुम्हारा कीमती समय बिगाड़ रहे हो, आनन्द पाने का यह तो कोई तरीका नहीं है'।** धनसंपत्ति के गर्व में ही श्री फिलिप्स ने कहा कि ''मैं कौन हूं तुम जानते हो? 37 कंपनियों का मालिक हूँ''—यह सुनकर प.पू. काकाजी फिर हंसे ! श्री फिलिप्स ने कहा, 'क्यों तुम हँसा ही करते हो? प.पू. काकाजी ने कहा कि मैं तुम्हारी गंभीर मूर्खता पर हँस रहा हूँ।

यह सुनकर श्री फिलिप्स को खूब अजीब लगा। उसने स्पष्ट बताने के लिये प.पू. काकाजी को आग्रह करा। तब प.पू. काकाजी ने जवाब दिया, 'मिस्टर फिलिप्स, तुम्हारी संपत्ति तुम्हारी नहीं है। संपत्ति तुम्हारे साथ आई नहीं थी व तुम्हारे साथ जाने वाली भी नहीं है। सच्ची संपत्ति तो सच्चे मित्र ही हैं, जो अपने साथ मुसीबतों में खड़े रहें और दुःख में मदद करें। मेरे पास ऐसे साथीदार हैं। तुम्हारे पास यदि ऐसे मित्र न हों तो तुमसे अधिक मैं सुखी हूँ—ज्यादा समृद्ध हूँ।''

श्री फिलिप्स की सत्ता से जरा भी डरे बिना पू. काकाजी ने 'जीवन का सच्चा-रूप' उनके सामने रखा दिया। श्री फिलिप्स प.पू. काकाजी पर इतने खुश हो गये कि उन्होंने सामने से जर्मन व हालैंड का लाखों रुपयों का Contract प.पू. काकाजी को दिलवाया। प.पू. काकाजी की अद्‌भुत प्रतिभा व सच्ची सूझवाली शूरवीरता का यहां सुन्दर दर्शन होता है।

एक बार प.पू. काकाजी के जन्मदिन पर बापा ने आशीर्वाद बरसाते हुए सहज कहा था कि **''जाओ तुम लाखों का कल्याण करोगे।''** तब प.पू. काकाजी ने विनम्रता से मांगा था 'बापा कल्याण तो लाखों करोड़ों का आपके आशीर्वाद से होगा, पर आप अगर सचमुच राजी हुए हो तो **अखंड निर्दोषबुद्धि रहे ऐसे आशीर्वाद दो।** यह सुनकर बापा अन्तर की प्रसन्नता व मस्ती से बोल उठे **''दादुभाई आप तो कईयों को निर्दोषबुद्धि** दृढ़ कराओगे।'' गुरु और शिष्य दोनों अनुपम.....!

समग्र गुणातीत समाज साक्षी है कि प.पू. काकाजी, प.पू. पप्पाजी, प.पू. कान्तिकाका की त्रिपुटी के समर्पण ने गुरुहरि शास्त्रीजी महाराज, गुरुहरि योगीजी महाराज के अन्तर को इतनी अधिक शीतलता कर दी थी कि इन पर उनके आशीर्वाद दिल के उद्‌गार सहज ही फिसलते ही रहते थे ! और.....गुरुहरि योगीजी महाराज ने अत्यंत राजी होकर प.पू. काकाजी व प.पू. पप्पाजी पर आशीर्वाद बरसाये—**'जाओ तुम दोनों जो भी मिलकर करोगे उसमें मैं आ गया।'** ऐसे ही आशीर्वाद वचन प.पू. काकाजी व पू. कांतिकाका को गुरुवर्य शास्त्रीजी महाराज ने भी दिये—**'तुम दोनों भाई-भाई7 बनकर रहोगे तो ब्रह्माण्ड डोलाओगे।'** गुरु के अन्तर को अपने वर्तन से 'हाश' कर देना—वही तो शिष्य के जीवन की संपूर्ण सार्थकता है न?

भगवत्स्वरूप प.पू. काकाजी, प.पू. पप्पाजी और पू. कांतिकाका के जीवन में लाभ-हानि, सुख-

दुःख, मान-अपमान, उतार-चढ़ाव के हजारों प्रसंग आये। कभी समृद्धि के शिखर पर पहुंचे और कभी कसौटी की पराकाष्ठा पर, सुख की धारायें भी देखीं और मुसीबतों के कंटीले घेरे भी....पर यह सब झंझट-द्वन्द्व उन्हें रंचमात्र भी स्पर्श नहीं कर सके। इससे भी अधिक भयंकर विपरीत परिस्थितियों में भी उन्होंने केवल कर्ता-हर्तापन एक शास्त्रीजी महाराज व योगीजी महाराज को ही माना। सो त्रिकाल में भी उनकी मस्ती गई नहीं—जो हम सबने देखा है, जाना है और अनुभव किया है। सोने को ही धधकती भट्ठी में डाला जाता है न? 51 युवकों को भागवती दीक्षा देते हुए पूरा भार बापा ने प.पू. काकाजी के कन्धों पर रखा। बहनों की प्रवृत्ति शुरू करने भी सबसे पहले प.पू. काकाजी को ही चुना। प.पू. हरिप्रसादस्वामीजी के शब्दों में **'अगर प.पू. काकाजी बहनों के कार्य की पहल न करते तो कभी भी बहनें भगवान भज नहीं सकती थीं।'**

प.पू. काकाजी की बातें केवल दूसरों को उपदेश देने के लिये नहीं थीं, बल्कि उनका स्वयं का समर्पण, पूरा जीवन अपने आप में पूर्ण आदर्श रूप था।

प.पू. काकाजी ने अपना तन, मन, धन, देह....कोई चीज अपने गुरु से अधिक प्यारी नहीं रखी थी। अफ्रीका से हरिभक्तों आये हों तो उनके लिये खुद की गाड़ी सेवा में रख देते और उसी समय उन्हें कोई काम आ पड़े तो स्वयं बस या टैक्सी से जाते थे। अपना सब कुछ सही मायने में 'योगी' का ही माना था। 1957 में प.पू. काकाजी गोंडल के अक्षर मंदिर के अपने गैस्ट हाऊस की सीढ़ियों पर कई हरिभक्तों के साथ बैठे थे, और वहां पर एक युवक ने सहज ही लिखने के लिये पेन मांगा। सहज भाव से पू. काकाजी ने अपनी कीमती पेन निकाल कर दे दी और कहा **'लो, अब तुम use करना।'** (प.पू. स्वामिश्री प.पू. हरिप्रसाद स्वामीजी) उस समय वहीं खड़े थे। उन्होंने प.पू. काकाजी को सहज ही कहा कि 'इसे मैं दूसरी पेन ला दूँगा, आपकी ये पेन बहुत महंगी है। ऐसी यहां—इस देश में दूसरी मिलेगी भी नहीं।' प.पू. काकाजी ने हँसते हुए सहजता से कहा ''स्वामी (बापा) की पेन है, स्वामी (बापा) use करेंगे।'' प.पू. काकाजी के इस उद्‌गार की गहराई विचारें तो ख्याल आयेगा कि उन्हें स्वयं के अस्तित्व का रंचमात्र भी आभास नहीं था।

''जो समर्पण करा है स्वामी ने ही करवाया, स्वामी (बापा) का ही स्वामी को सौंपा है'' ऐसी एक सहज भावना से तो उन्होंने समर्पण की शुरुआत करी.....

आज इनके अनहद् परिश्रम से 'योगी परिवार' हम सभी के सामने देश-विदेश में अपने पूर्ण-रूप में विकसित होता जा रहा है। परन्तु इस भव्य आलीशान महल के नीचे की 'नींव की ईंट' को क्या हम कभी भुला पायेंगे? जिस बगीचे को सुदृढ़ माली मिल जाये, फिर चाहे उस बगीचे की जमीन बंजर ही क्यों न हो, लेकिन जैसे वह माली धूप, गर्मी, सर्दी, बरसात, आंधी तूफान दिन या रात की परवाह किये बिना उस बगीचे की देखभाल व फूलों के संपूर्ण विकास के लिये स्वयं की कुर्बानी दे देता है, ठीक वैसे ही योगीजी महाराज द्वारा सौंपे हुए गुणातीत बाग के हरेक पौधे को प.पू. काकाजी ने अपने लहू से सींचा ! अरे ! वह चैतन्यशिल्पी तो हम जैसे टेढ़े-मेढ़े नुकीले पत्थरों को हीरा बनाने अपनी उम्र के आखिरी पल तक प्रयत्न करता ही रहा... करता ही रहा... हम सभी के स्वभाव प्रकृति को निभाता ही रहा।

प्रीति तो उस आत्मीयता के सम्राट से हमें करी थी, इसके बजाय उन्होंने हमसे की। 1985 के अप्रैल महीने में कुछ सेवकों को आनन्द कराने

प.पू. काकाजी हरिद्वार–ऋषिकेश ले गये थे। सेवक लोग कुछ आनन्द करने लक्ष्मणझूला तक घूमते-घूमते निकल गये...दोपहर के खाने का समय हुआ था। प.पू. काकाजी हरिद्वार के 'गीता भवन' से लगभग साढ़े तीन किलोमीटर पैदल चलकर दोपहर की तपती धूप में अपने हाथों में खाने की थालियां लेकर लक्ष्मण झूले तक पहुँचे व बोले **'लो, मैं तुम लोगों का खाना ले आया हूँ, जल्दी खा लो तुम्हें भूख लगी होगी।'** सेवक लोग तो प.पू. काकाजी के पसीने से लथपथ मुख को किंकर्तव्यविमूढ़ होकर देखते ही रहे.....देखते ही रहे....असली 'गुलाम' सेवक तो वह बने न कि हम....कोटि-कोटि वंदन उस चैतन्यजननी के छुपे श्रम को.....

जिस प्रकार गहरे पानी में पैठने से अनमोल मोती की प्राप्ति होती है, इसी प्रकार प.पू. काकाजी के जीवन को जितना अधिक करीब से निहारेंगे उतना अधिक हमें लगेगा–अहो हो ! प.पू.काकाजी कैसे? अरे ! प.पू. काकाजी ऐसे थे? तब अन्तर से एक आवाज आती है कि प.पू. काकाजी को पहचानने में हम सचमुच अवसर चूक गये। उनको जो पसन्द था 'सुहृदभाव-मैत्री भाव'–जो दो शब्द उन्होंने कई बार कहे.....तब भी क्या वो हमने किया? पहले पू. काकाजी खूब कहते रहे कि दो भिन्न-भिन्न रूचि वालों के साथ मैत्री रखो। वह हमने नहीं किया, तो आखिर वे अपनी वह रट छोड़कर इस बात पर आये कि चलो तो समान रुचि वालों के साथ तो मैत्री करो। पर दुःख की बात तो यह है कि हम वह भी न कर पाये ! और फिर भी....उनकी करुणा में तनिक भी फर्क नहीं पड़ा। धन्य-धन्य हो उस दिव्यभाव व निर्दोषबुद्धि के सम्राट को !

प.पू. काकाजी कई बार यह ब्रह्मसूत्र दोहराते थे **''प्रभु के स्वभाव जचांओगे तो निर्वासनिक हो जाओगे व भक्तों के स्वभाव जचांओगे तो स्वभाव रहित हो जाओगे।''** वे तो हमें मिट्टी के भाव सोना देना चाहते थे। अर्थात् हमारे हल्के स्वभाव, वृत्तियां लेकर बदले में 'प्रभु की मूर्ति' का सुख देना चाहते थे पर हम ....????

अभी भी उस करुणासिंधु की नजर सेकेण्ड-सेकण्ड हमारी ओर ही है। सो अभी भी हम उनके परिश्रम को समझकर–दिल से प्रायश्चितरूप भजन करें कि आप हमें जिस अभेददृष्टि, अविरोधवृत्ति व सर्वदेशीयता की Top भूमिका पर ले जाना चाहते थे वह आपके अनुग्रह से अवश्य ले जाना। आपके स्वरूप की महिमा दूसरों को समझाने से पहले हम स्वयं समझें। हमारी नजर सतत् आपकी ओर रहे... आपका व आपके अल्प संबंध वालों का गुणगान करते ही हमारे जीवन की पल-पल बीतें यही इस पावन महामंगलकारी दिन पर गुणतीत स्वरूपों के चरणों में अन्तर की अभीप्सा।

व्रतोत्सवसूची

1.	दि. 12.6.89	सोमवार	ब्र.स्व.प.पू. काकाजी महाराज का प्राकट्य दिन
2.	दि. 13.6.89	मंगलवार	भगवान स्वामिनारायण का स्वधामगमन दिन
3.	दि. 15.6.89	गुरुवार	भीम एकादशी, व्रत

PUBLISHED By SADHU MUKUNDJIVANDAS FOR YOGI DIVINE SOCIETY,
A 103, Ashokvihar-III, Delhi-110 052. (India) Tel.: 7229327, 7119525
Printed at R.P. Printers, Shahdara, Delhi-110 032